भारतीय ज्ञान परंपरा

संस्कृति, दर्शन, शैक्षिक विचारधाराएँ और नवाचार

सम्पादक :
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

भारतीय ज्ञान परंपरा :

संस्कृति, दर्शन, शिक्षा विचारधाराएँ और नवाचार

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

Ph.D., D.Lit. (Sub.)

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,

अजमेर

छवि पब्लिकेशन्स

अजमेर-305001

प्रकाशक :
छवि पब्लिकेशन्स
अजमेर-305001
मो. 9660111549

संस्करण :
प्रथम 2022-2023

ISBN : 978 - 81 - 89435 - 64 - 6

मूल्य - 300/-

रचना - भारतीय ज्ञान परम्परा में शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार

सम्पादक - डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

मुद्रक - श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

9. वेदों में भूगोल

कृपा शर्मा
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साईंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

भारतीय संस्कृति का सर्वप्राचीन और सर्वमान्य ग्रंथ वेद हैं। ये न केवल धर्म या अध्यात्म के ग्रंथ हैं, बल्कि मानव सभ्यता के प्रारम्भिक वैज्ञानिक दस्तावेज भी हैं। वेदों में जहाँ यज्ञ, ऋत, देवता, समाज और जीवन-मूल्यों का विवेचन है, वहीं पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, आकाश, नदियाँ, पर्वत, सागर, दिशाएँ, सूर्य, चन्द्र और ग्रहों का भी विस्तृत उल्लेख मिलता है। इसीलिए कहा जाता है कि वेद केवल ईश्वर की स्तुति नहीं, बल्कि विज्ञान और भूगोल का आधारभूत ग्रंथ हैं।

वेदों में भूगोल का दृष्टिकोण आध्यात्मिक और वैज्ञानिक दोनों है। पृथ्वी को केवल धरा या भूमि नहीं, बल्कि चेतना, जीवन और पोषण देने वाली माता के रूप में देखा गया है। ऋग्वेद में कहा गया है- 'भद्रा भूमिः पृथिवी विश्वम्भरा।' इसका अर्थ है कि पृथ्वी शुभ और सभी जीवों को धारण करने वाली है। अथर्ववेद में कहा गया है 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।' इसमें पृथ्वी और मानव के बीच के गहन संबंध का सार समाहित है।

वेदों में भूगोल का उद्देश्य केवल पृथ्वी की आकृति या सीमाओं का वर्णन करना नहीं था, बल्कि उस समग्र जगत को समझना था जिसमें मनुष्य, प्रकृति और ब्रह्माण्ड परस्पर जुड़े हुए हैं। 'भू' शब्द संस्कृत धातु 'भू' से बना है, जिसका अर्थ है — 'होना' या 'धारण करना'। इस दृष्टि से 'भूगोल' का अर्थ हुआ — पृथ्वी और उसके धारक स्वरूप का ज्ञान। वेदों में यह भूगोल केवल स्थूल रूप में नहीं, बल्कि दार्शनिक और पर्यावरणीय चेतना से परिपूर्ण है।

ऋग्वेद और अथर्ववेद में पृथ्वी को माता कहा गया है। एक प्रसिद्ध मंत्र में कहा गया है — ''माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः'' (अथर्ववेद 12.1.12) अर्थात् — पृथ्वी हमारी माता है और हम उसके पुत्र हैं। यह भाव केवल श्रद्धा का नहीं, बल्कि यह दर्शाता है कि मनुष्य और पृथ्वी के बीच मातृ-पुत्र जैसा संबंध है। पृथ्वी को पालक, धारण करने वाली और सभी जीवों की आश्रयदात्री बताया गया है। ऋग्वेद (5.84.1) में कहा

गया है — ''पृथिवी महती भूतानि धारयति।'' अर्थात् — पृथ्वी समस्त प्राणियों को अपने ऊपर धारण करती है। यह विचार मानव और पर्यावरण के अभिन्न संबंध का प्राचीनतम दर्शन प्रस्तुत करता है।

वेदों में पृथ्वी को स्थिर, गोलाकार और सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित बताया गया है। ऋग्वेद में 'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च' (1.115.1) कहा गया है, जिसका अर्थ है — सूर्य स्थावर और जंगम सभी का आत्मा है। इससे यह संकेत मिलता है कि वेदकालीन ऋषियों को सूर्य की गति और पृथ्वी के उस पर निर्भर जीवन का गहन ज्ञान था। वेदों में बार-बार 'दिव', 'द्युलोक', 'अन्तरिक्ष' और 'पृथ्वी' शब्दों का प्रयोग हुआ है — जो ब्रह्माण्डीय व्यवस्था के तीनों स्तरों को सूचित करते हैं। यह त्रिभुवन व्यवस्था आज के भौतिक भूगोल के तल, वायुमण्डल और अन्तरिक्ष की अवधारणा के समान है।

वेदों में दिशाओं का उल्लेख अत्यन्त स्पष्टता से मिलता है। पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण — इन चार प्रमुख दिशाओं के साथ ईशान, नैऋत्य, वायव्य और आग्नेय को भी स्वीकार किया गया है। ऋग्वेद (10.85.13) में कहा गया है — 'दिशो विद्वान् दिशो अव्ययान्', अर्थात् — ज्ञानी व्यक्ति दिशाओं को जानता है। यह वाक्य केवल दार्शनिक नहीं, बल्कि भौगोलिक ज्ञान का प्रतीक है। अथर्ववेद में प्रत्येक दिशा के साथ देवताओं का सम्बन्ध बताया गया है — पूर्व में आदित्य, पश्चिम में वरुण, उत्तर में सोम और दक्षिण में यम। इससे यह सिद्ध होता है कि वैदिक लोग दिशाओं के स्थायी निधाज़रण से परिचित थे, और उनके अनुसार ही नगर, वेदियाँ, यज्ञस्थल और ग्रामों का नियोजन किया जाता था।

वेदों में पर्वतों और नदियों का भी अत्यंत सूक्ष्म वर्णन है। ऋग्वेद में 'हिमवन्त' शब्द का प्रयोग हुआ है, जो आज के हिमालय का प्रतीक है — 'हिमवन्तं गिरिं नु स्तोमैरभि गायत' (ऋग्वेद 1.62.2)। हिमालय पर्वत को विशेष महत्व दिया गया है क्योंकि इसके स्रोत से नदियाँ निकलती हैं और जीवन का आधार बनती हैं। वेदों में अर्बुद, निषध, मुजवत जैसे अन्य पर्वतों का भी उल्लेख मिलता है। पर्वतों को जीवनदायिनी नदियों का उद्गम स्थल बताया गया है — 'अपो वहन्ति गिरयः सर्वतः' (ऋग्वेद 10.121.1) अर्थात् — पर्वतों से चारों ओर जल प्रवाहित होता है। यह विचार आज के भौगोलिक सिद्धांत के अनुरूप है कि पर्वत वर्षा का स्रोत और नदियों का जनक हैं। पर्वत केवल भौगोलिक स्थल नहीं, बल्कि प्राकृतिक संतुलन और जलवायु नियंत्रक के रूप में समझे गए।

नदियों के संदर्भ में ऋग्वेद का 'नदी सूक्त' (10.75) अत्यन्त प्रसिद्ध है। इसमें सप्तसिंधु क्षेत्र की प्रमुख नदियों — सिन्धु, सरस्वती, वितस्ता, असिक्नी, परुष्णी, शुतुद्री, यमुना और गङ्गा का उल्लेख है। सरस्वती का उल्लेख सर्वाधिक है और उसे सबसे श्रेष्ठ

नदी कहा गया है — 'अम्बितमे नदीतमे देवितमे सरस्वति' (ऋग्वेद 2.41.16)। इस प्रकार वेदों का भूगोल उत्तर-पश्चिम भारत, विशेषत: पंजाब और हरियाणा क्षेत्र के इर्द-गिर्द केन्द्रित था। सरस्वती को 'नदी माता' कहा गया है — वह भौगोलिक, सांस्कृतिक और धार्मिक जीवन की आधारशिला थी।

वेदों में सागर और समुद्र का भी बार-बार उल्लेख हुआ है। ऋग्वेद में में सागर को अनन्त और व्यापक बताया गया है। 'अमृतं आप: सागरस्य नाभौ।' अथर्ववेद में कहा गया है, 'समुद्रादुद्धृतं घृतं' (ऋग्वेद 1.46.7) मंत्र इस बात का प्रतीक है कि सागर को समस्त जीवन का स्रोत माना गया। सागर से वृष्टि और वृष्टि से अन्न की उत्पत्ति का विचार स्पष्ट रूप से व्यक्त हुआ है। ऋग्वेद (1.116.5) में पृथ्वी को चारों ओर से सागर से घिरी हुई बताया गया है। यह पृथ्वी के जलमण्डल की अवधारणा का प्रमाण है। जल को जीवन का मूल कहा गया है — 'अप्सु अन्तरं भूतेषु' (अथर्ववेद 12.1.12) अर्थात् — जल सभी प्राणियों के भीतर विद्यमान है।

वेदों में वायु, पर्जन्य और सूर्य को मौसम और ऋतु परिवर्तन के कारक बताया गया है। 'इन्द्र: वृष्टिं ददाति' (ऋग्वेद 1.32.9) और 'पर्जन्येन पृथिवी पुष्यति' (ऋग्वेद 5.83.4) जैसे मंत्र दर्शाते हैं कि ऋषियों को वर्षा-चक्र और जलवायु परिवर्तन का ज्ञान था। पर्जन्य को वर्षा का देवता कहा गया है और यह बताया गया है कि वायु और सूर्य की गति से पृथ्वी की उर्वरता बनी रहती है। यह विचार पर्यावरणीय भूगोल के प्रारम्भिक रूप का परिचायक है।

आकाश और अन्तरिक्ष की चर्चा भी वेदों में अत्यन्त गहन रूप से की गई है। 'द्वे आकाशे अन्तरिक्षे पृथिव्या:' (ऋग्वेद 1.164.11) में पृथ्वी और आकाश के बीच अन्तरिक्ष की संकल्पना दी गई है। वेदों में नक्षत्रों, ग्रहों और सूर्यपथ का भी उल्लेख है, जिससे यह ज्ञात होता है कि ऋषियों को खगोल और ब्रह्माण्डीय भूगोल का गहरा ज्ञान था। सूर्य को जगत का आत्मा कहा गया है — 'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च'। वेदों में सूर्य के उदय-अस्त से दिन-रात की अवधारणा, दिशा और समय का ज्ञान प्रकट होता है — 'यत्र सूर्य उदयति तत्र लोक:' (ऋवेद 10.85.18)।

वेदों में ऋतुओं का वर्णन भी अत्यंत सजीव है। छह ऋतुएँ — वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त और शिशिर का उल्लेख अथर्ववेद (19.7.2) में हुआ है — 'ऋतव: संवत्सरं वहन्ति।' ऋषियों को ज्ञात था कि सूर्य की गति और पृथ्वी के झुकाव से ऋतु परिवर्तन होता है। यह विचार आज के खगोल-भूगोल के समान है। वेदों में समय, काल, संवत्सर, पक्ष और मास का भी उल्लेख है जिससे यह ज्ञात होता है कि वैदिक सभ्यता में खगोलीय गणना और पंचांग की परम्परा थी।

वेदों में भूगोल का उद्देश्य केवल प्राकृतिक संरचना का ज्ञान देना नहीं था, बल्कि

यह सिखाना था कि मनुष्य प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करके ही जीवन को संतुलित बना सकता है। पृथ्वी को माता, जल को जीवन, वायु को प्राण, अग्नि को शक्ति और आकाश को चेतना के रूप में देखा गया। अथवज़्वेद में स्पष्ट कहा गया — 'मा हिंस्यान् पृथिवीं' (12.1.35) अर्थात् — पृथ्वी को कभी हानि मत पहुँचाओ। यह आज के पर्यावरण संरक्षण के सिद्धान्त का आदर्श रूप है।

वेदों की भूगोल दृष्टि आधुनिक विज्ञान से कई स्थानों पर मेल खाती है। ऋषियों ने पृथ्वी को गोल बताया, सागर को पृथ्वी का घेरा माना, पर्वतों को जल का स्रोत, और वायु को जीवन का वाहक बताया। उन्होंने सूर्य और पृथ्वी के सम्बन्ध को पहचाना और यह भी समझा कि ब्रह्माण्ड का संचालन एक नियम और व्यवस्था से होता है। इस प्रकार, वेदों में भूगोल केवल भौतिक धरातल का अध्ययन नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक विज्ञान है जो बताता है कि सृष्टि का प्रत्येक अंश एक-दूसरे से जुड़ा हुआ है।

अंततः कहा जा सकता है कि वेदों में भूगोल का स्वरूप अत्यन्त व्यापक, वैज्ञानिक और मानवीय है। उसमें पृथ्वी का सौन्दर्य, दिशाओं की व्यवस्था, नदियों का प्रवाह, पर्वतों की स्थिरता, सागर की विशालता और आकाश की अनन्तता सबका समन्वय दिखाई देता है। वेदों के ऋषि प्रकृति के उपासक थे, उन्होंने पृथ्वी को माता कहा और उसके संरक्षण को धर्म माना। यही वैदिक भूगोल का मूल संदेश है कि पृथ्वी केवल भौतिक वस्तु नहीं, बल्कि चेतन, जीवंत और पालन करने वाली माता है। आज के युग में जब पर्यावरण संकट बढ़ रहा है, तब वेदों की यह आवाज हमें स्मरण दिलाती है — ''पृथ्वी हमारी माता है, उसकी रक्षा ही हमारा सर्वोच्च धर्म है।''

❑❑❑